ISSN 2249-894X Impact Factor : 3.1402 (UIF) Volume - 5 | Issue - 3 | Dec - 2015

Review Of Research

गुप्तकलीन साहित्य

प्रा. रेवणसिध्द रामभाऊ बेरुनगीकर
दयानंद कला व शास्त्र महाविदयालय सोलापूर.

सारांश:

गुप्त काल को संस्कृत साहित्य का स्वर्ण युग माना जाता है। बार्नेट(Barnett) के अनुसार 'प्राचीन भारत के इतिहास में गुप्त काल का वह महत्त्व है जो यूनान के इतिहास में पेरिक्लीयन)Periclean) युग का है। ' स्मिथ ने गुप्त काल की तुलना ब्रिटिश इतिहास के 'एजिलाबेथन' तथा 'स्टुअर्ट' के कालों से की है। गुप्त काल को श्रेष्ठ कवियों का काल माना जाता है। इस काल के कवि को दो भागों में बांटा गया है,-

गुप्त काल

इस काल की कला का प्रमुख वैशिष्ट्य मूर्ति कला ही है। कलाकार के कुशल हाथों में पड़कर इस काल की मिट्टी और प्रस्तर सौंदर्य की जीती जागती प्रतिमाओं में बदल जाते थे। गुप्त कालीन कलाकारों ने कुषाण काल के शारीरिक सौंदर्य के उन्तान प्रदर्शन को नहीं अपनाया वरन् स्थूल सौंदर्य और भाव सौंदर्य का सुन्दर योग स्थापित किया। गुप्त कला में निवस्त्र व नग्न चित्रण को कोई स्थान नहीं है जबकि कुषाण कला की वह एक अपनी निज विशेषता थी। कुषाण कला का पारदर्शक केश विन्यास शरीक के सौष्ठव को , उसके मांसल अवयवों को चमकाने के लिए बनाया जाता था , परन्तु गुप्त काल का वस्त्र विलास उसे सुरुचिपूर्ण ढ़ग से आच्छादित करने के लिए ही बनता था। वेदिका स्तम्भों पर अंकित क्रीड़ारत युवतियों का अंकन गुप्त युग में लोकप्रिय न रहा। अब इन बाहर की प्रतिमाओं की अपेक्षा गर्भग्रह के अन्दर स्थापित उपास्य मूर्ति के सौंदर्य को अधिक मूल्य दिया जाने लगा।

डॉ. कुमार स्वामी के अनुसार गुप्त काल की कला जो मथुरा की कुषाण कला से उद्भूत है , स्त: एक रुप एवं स्वाभाविक है।

गुप्त कालीन मानव मूर्तियों की कुछ विशेषताएँ, जो बहुधा सर्वसाधारण रुप से देखी जा सकती हैं, निम्नांकित हैं –

- सादी एवं प्रभावोत्पादक शैली जिसकी सहायता से अनेक भव्य आदर्श साकार हो उठे हैं। बुद्ध की कुछ मूर्तियों में (उदाहरणार्थ मथुरा संग्रहालय मूर्ति संख्या ००. ए ५ , चित्र ७९) तथा मथुरा की गुप्त कालीन विष्णु मूर्ति में जो इस समय राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली में है, आध्यात्मिक शांति, प्रसन्नता, स्नेह व दयाशीलता के स्पष्ट दर्शन होते हैं।
- मूर्ति के अंकन में यथार्थ की अपेक्षा आदर्श की मात्रा बढ़ जाती हैं उदाहरण के लिए आँखें अब गोल नहीं होती अपितु वे धनुषाकार भौहों के साथ कान तक (आकर्ण) फैल जाती हैं और आकाश में लम्बी और कोनेदार दिखलाई पड़ती है।

- पाषाण प्रतिमाओं में आँखों की पुतलियाँ कम ही निर्मत होती रहीं और आँखें अधखुली दिखलाई जाती थीं।
- नाक सीधी, कपोल चिकने, होंठ कुछ मोटे तथा गढ़्ढेदार बनाए जाने लगे। कानों की बनावट में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हो गया।
- कुषाण काल में हास्य का प्रदर्शन करने के लिए कभी-कभी दन्तावली दिखलाई जाती है, पर गुप्त काल में विशेष प्रकार की मूर्तियों को छोड़कर सामान्यत: केवल मंदस्मित से ही काम लिया गया है।
- विष्णु, कार्तिकेय, इन्द्र आदि मूर्तियों में भौंहों के बीच दिखलाई पड़ने वाले देवत्व का प्रदर्शक ऊर्णा चिह्न अब अदृश्य हो जाता है।
- केशों की बनावट में अनेक आकर्षक प्रकार दिखलाई पड़ने लगते हैं।
- वस्त्र सधारणतया झीनें और शरीर से चिपके हुए दिखलाई पड़ते हैं।
- कुषाण काल की अपेक्षा अलंकारों की संख्या कम होने लगती है। कुछ चुने हुए आभूषण जैसे कंठ की एकावली , हाथों में अंगद और कंकण, मोतियों का जनेऊ, करधनी और नूपुर ही साधारणतया दिखलाई पड़ते हैं।

गुप्तों की उत्पत्ति

गुप्त राजवंशों का इतिहास साहित्यिक तथा पुरातात्विक दोनों प्रमाणों से प्राप्त है। इसके अतिरिक्त विदेशी यात्रियों के विवरण से भी गुप्त राजवंशों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

- साहित्यिक साधनों में पुराण सर्वप्रथम है जिसमें मत्स्य पुराण, वायु पुराण, तथा विष्णु पुराण द्वारा प्रारम्भिक शासकों के बारे में जानकारी मिलती है।
- बौद्ध ग्रंथों में 'आर्य मंजूश्रीमूलकल्प' महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। इसके अतिरिक्त 'वसुबन्धु चरित' तथा 'चन्द्रगर्भ परिपृच्छ' से गुप्त वंशीय इतिहास की महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है।
- जैन ग्रंथों में 'हरिवंश' और 'कुवलयमाला' महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है।
- स्मृतियों में नारद , पराशर और बृहस्पति स्मृतियों से गुप्तकाल की सामाजिक , आर्थिक एवं राजनीतिक इतिहास की जानकारी मिलती है।
- लौकिक साहित्य के अन्तर्गत विशाखदत्त कृत 'देवीचन्द्रगुप्तम्' (नाटक) से गुप्त नरेश रामगुप्त तथा चन्द्रगुप्त के बारे में जानकारी मिलती है। अन्य साहित्यिक स्रोतों में - अभिज्ञान शाकुन्तलम् , रघुवंश महाकाव्य,मुद्राराक्षस, मृच्छकटिकम, हर्षचरित, वात्सायनन के कामसूत्र आदि से गुप्तकालीन शासन व्यवस्था एवं नगर जीवन के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।
- अभिलेखीय साक्ष्य के अन्तर्गत समुद्रगुप्त का प्रयाग प्रशस्ति लेख सर्वप्रमुख है , जिसमें समुद्रगुप्त के राज्यभिषेक उसके दिग्विजय तथा व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है। अन्य अभिलेखों में चन्द्रगुप्त द्वितीय के उदयगिरि से प्राप्त गुहा लेख, कुमार गुप्त का विलसड़ स्तम्भ लेख स्कंद गुप्त का भीतरी स्तम्भ लेख, जूनागढ़ अभिलेख महत्पूर्ण हैं।
- विदेशी यात्रियों के विवरण में फ़ाह्यान जो चन्द्रगुप्त द्वितीय के काल में भारत आया था। उसने मध्य देश के जनता का वर्णन किया है। 7वी. शताब्दी ई. में चीनी यात्री ह्वेनसांग के विवरण से भी गुप्त इतिहास के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। उसने बुद्धगुप्त , कुमार गुप्त प्रथम , शकादित्य तथा बालदित्य आदि गुप्त शासकों का उल्लेख किया है। उसके विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुमार गुप्त ने ही नालन्दा विहार की स्थापना की थी।

गुप्त काल स्वर्ण काल

गुप्त काल को स्वर्ण युग)Golden Age), क्लासिकल युग)Classical Age) एवं पैरीक्लीन युग)Periclean Age) कहा जाता है। अपनी जिन विशेषताओं के कारण गुप्तकाल को 'स्वर्णकाल' कहा जाता है, वे इस प्रकार हैंसाहित्य -, विज्ञान, एवं कला के उत्कर्ष का काल, भारतीय संस्कृति के प्रचार प्रसार का काल, धार्मिक सहिष्णुता एवं आर्थिक समृद्धि का काल, श्रेष्ठ शासन व्यवस्था एवं महान सम्राटों के उदय का काल एवं राजनीतिक एकता का काल , इन समस्त विशेषताओं के साथ ही हम गुप्त को स्वर्णकाल , क्लासिकल युग एवं पैरीक्लीन युग कहते हैं। कुछ विद्वानों जैसे आरशर्मा.एस., डी .डी.

कौशम्बी एवं डॉरोमिला थापर . गुप्त के 'स्वर्ण युग' की संकल्पना को निराधार सिद्ध करते हैं क्योंकि उनके अनुसार यह काल सामन्तवाद की उन्नति, नगरों के पतन, व्यापार एवं वाणिज्य के पतन तथा आर्थिक अवनति का काल था।

गुप्तकाल के धार्मिक ग्रंथ

पुराण

पुराणों के वर्तमान रूप की रचना गुप्त काल में ही हुई, इनमें ऐतिहासिक परम्पराओं का उल्लेख मिलता है। पुराणों का अंतिम रूप से संकलन भी गुप्त काल में हुआ है। दो महान गाथा काव्य रामायण और महाभारत ईसा की चौथी सदी (गुप्तकाल) में पूरे हो चुके थे। अतः इनका संकलन गुप्त युग में ही हुआ। 'रामायण' में परिवार रूपी संस्था का आदर्श रूप वर्णित है। 'महाभारत' में दुष्ट शक्ति पर इष्ट शक्ति की विजय दिखाई गई है। 'भगवत्गीता'प्रतिफल की कामना के बिना कर्तव्य पालन के निर्देश देती हैं।

स्मृतियां

गुप्त काल में याज्ञवल्क्य, नारद, कात्यायन, एवं बृहस्पति की स्मृतियां लिखी गई। इनमें 'याज्ञवल्क्य स्मृति' सबसे महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। इस स्मृति में आचार, व्यवहार, प्रायश्चित आदि का उल्लेख है। हीनयान (बौद्ध धर्म) शाखा के 'बुद्ध घोष' ने त्रिपिटकों पर भाष्य लिखा, इनका प्रसिद्ध गंथ 'विसुद्दिभग्य' है। जैन दार्शिनिक आचार्य 'सिद्धसेन' ने न्याय दर्शन पर 'न्यायवताम्' ग्रंथ लिखा है।

गुप्तकालीन ग्रंथ

रचनाकार	रचना
चन्द्रगोमिन	चन्द्र व्याकरण
अमर सिंह	अमरकोष (संस्कृत का प्रमाणित कोष)
कामन्दक	नीतिसार (कौटिल्य के अर्थशास्त्र से प्रभावित)
वात्स्यायन	कामसूत्र

- विज्ञान

गुप्त काल में खगोल शास्त्र, गणित तथा चिकित्सा शास्त्र का विकास भी अपने उत्कर्ष पर था।

वराहमिहिर

गुप्त काल के प्रसिद्ध खगोलशास्त्री वराहमिहिर है। इनके प्रसिद्ध ग्रंथ वृहत्ससंहिता तथा पञ्चसिद्धन्तिका है। वृहत्संहिता में नक्षत्र-विद्या, वनस्पतिशास्त्रम्, प्राकृतिक इतिहास, भौतिक भूगोल जैसे विषयों पर वर्णन है।

आर्यभट्ट

'आर्यभट्टीय'नामक ग्रंथ की रचना करने वाले आर्यभट्ट अपने समय के सबसे बड़े गणितज्ञ थे। इन्होनें दशमलव प्रणाली का विकास किया। इनके प्रयासों के द्वारा ही खगोल विज्ञान को गणित से अलग किया जा सका। आर्यभट्ट ऐसे प्रथम नक्षत्र वैज्ञानिक थे, जिन्होंने यह बताया कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती हुई सूर्य के चक्कर लगाती है। इन्होनें सूर्यग्रहण एवं चन्द्रग्रहण होने वास्तविक कारण पर प्रकाश डाला। आर्यभट्ट ने सूर्य सिद्धान्त लिखा।

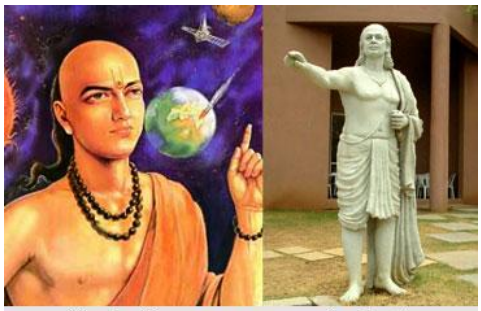
Varahamihira Aryabhatta

आर्यभट्ट के सिद्धान्त पर भास्कर प्रथम ने टीका लिखी। भास्कर के तीन अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है- 'महाभास्कर्य', 'लघुभास्कर्य' एवं 'भाष्य'। ब्रह्मगुप्त ने 'ब्रह्म-सिद्धान्त' की रचना कर बताया कि 'प्रकृति के नियम के अनुसार समस्त वस्तुएं पृथ्वी पर गिरती हैं, क्योंकि पृथ्वी अपने स्वभाव से ही सभी वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करती है। यह न्यूटन के सिद्धान्त के पूर्व की गयी कल्पना है। आर्यभट्ट , वराहमिहिर एवं ब्रह्मगुप्त को संसार के सर्वप्रथम नक्षत्र-वैज्ञानिक और गणितज्ञ कहा गया है।

कला और स्थापत्य

गुप्त काल में कला की विविध विधाओं जैसे वस्तं स्थापत्य , चित्रकला, मृदभांड कला आदि में अभूतपूर्ण प्रगति देखने को मिलती है। गुप्त कालीन स्थापत्य कला के सर्वोच्च उदाहरण तत्कालीन मंदिर थे। मंदिर निर्माण कला का जन्म यही से हुआ। इस समय के मंदिर एक ऊँचे चबूतरें पर निर्मित किए जाते थे। चबूतरे पर चढ़ने के लिए चारों ओर से सीढ़ियों का निर्माण किया जाता था। देवता की मूर्ति को गर्भगृह में स्थापित किया गया था और गर्भगृह के चारों ओर ऊपर से आच्छादित प्रदक्षिणा मार्ग का निर्माण किया जाता था। गुप्तकालीन मंदिरों पर पार्श्वों पर गंगा, यमुना, शंख व पद्म की आकृतियां बनी होती थी। गुप्तकालीन मंदिरों की छतें प्रायः सपाट बनाई जाती थी पर शिखर युक्त मंदिरों के निर्माण के भी अवशेष मिले हैं। गुप्तकालीन मंदिर छोटी-छोटी ईटों एवं पत्थरों से बनाये जाते थे। 'भीतरगांव का मंदिर' ईटों से ही निर्मित है|

गुप्त काल में कला की विविध विधाओं जैसे वास्तु , स्थापत्य, चित्रकला, मृदभांड, कला आदि में अभूतपूर्ण प्रगति देखने को मिलती है। गुप्तकालीन स्थापत्य कला के सर्वोच्च उदाहरण तत्कालीन मंदिर थे। मंदिर निर्माण कला का जन्म यहीं से हुआ। इस समय के मंदिर एक ऊँचे चबूतरें पर निर्मित किए जाते थे। चबूतरे पर चढ़ने के लिए चारों ओर से सीढ़ियों का निर्माण किया जाता था। देवता की मूर्ति को गर्भगृह (Sanctuary) में स्थापित किया गया था और गर्भगृह के चारों ओर ऊपर से आच्छादित प्रदक्षिणा मार्ग का निर्माण किया जाता था। गुप्तकालीन मंदिरों पर पार्श्वों पर गंगा , यमुना, शंख व पद्म की आकृतियां बनी होती थी। गुप्तकालीन मंदिरों की छतें प्रायः सपाट बनाई जाती थी पर शिखर युक्त मंदिरों के निर्माण के भी अवशेष मिले हैं।

दशावतार विष्णु मन्दिर, देवगढ़

गुप्तकालीन महत्त्वपूर्ण मंदिर

मंदिर	स्थान
शिव मंदिर	भूमरा (नागोद मध्य प्रदेश)
विष्णुमंदिर	तिगवा (जबलपुर मध्य प्रदेश)
पार्वती मंदिर	नचना कुठार (मध्य प्रदेश)
दशावतार मंदिर	देवगढ़ (झांसी, उत्तर प्रदेश(
शिवमंदिर	खोह (नागौद, मध्य प्रदेश)
भीतरगांव का मंदिर लक्ष्मण मंदिर (ईंटों द्वारा निर्मित)	भितरगांव (कानपुर, उत्तर प्रदेश)

साहित्य

गुप्तकाल को संस्कृत साहित्य का स्वर्ण युग माना जाता है। बार्नेट के अनुसार प्राचीन भारत के इतिहास में गुप्त काल का वह महत्त्व है जो यूनान के इतिहास में पेरिक्लीयन युग का है। स्मिथ ने गुप्त काल की तुलना ब्रिटिश इतिहास के एजिलाबेथन तथा स्टुअर्ट के कालों से की है। गुप्त काल को श्रेष्ठ कवियों का काल माना जाता है।

गुप्तोत्तर कालीन मूर्तियाँ

गुप्तोत्तर काल में सभी सम्प्रदाय की मूर्तियाँ तो खूब बनती रहीं पर कला और सौंदर्य की दृष्टि से उनमें गुप्त काल की सर्वांग सुन्दरता नहीं दिखलाई पड़ती है बहुत सी मूर्तियों में मौलिकता का अभाव है। तथापि इन मूर्तियों का एक अपना सौंदर्य है। मथुरा कला की मध्य कालीन प्रतिमाओं की मुख्य रुप से अधोलिखित विशेषताएँ गिनाई जा सकती हैं –

१) मथुरा की कलाकृतियों के लिए आब तक जहाँ चिट्टेदार लाल प्रस्तर का प्रयोग होता था वहाँ अब मध्य काल में पहुँचत-पहुँचते भूरे रंग के बलुए प्रस्तर का प्रयोग होने लगा और कलाकारों ने लाल प्रस्तर की मूर्तियाँ गढ़ने के लिए आश्रय देना समाप्त सा कर दिया।

२) इस काल की प्रतिमाओं में मांसलता और छोटा कद अधिक दिखलाई पड़ता है। साथ ही कवि-संकेत-सिद्ध सौंदर्य के मानदण्डों को जैसे विशाल आकर्षक-नेत्र , शुक-चंचु के समान नासिक , निकली हुई कोनेदार ठोड़ी , स्त्रियों के अविरल स्तन-युग्म, इत्यादि को प्रमुख रुप से अपनाया गया।

३) इसके साथ-साथ अलंकारों के अंकन की मात्रा भी बढ़ गई। भारी कंठ-भूषण, अलंकारों से भरे हुए हाथ, भारी वजन की मेखलाएँ या रसना-जाल, ऊँचे हुए मुकुट, पुष्पों से शोभित धम्मिल्ल एवं नयनरम्य केशभार इस काल की मूर्तियों में बड़ी ही रुचि से बनाए जाते थे।

४) मथुरा की मध्य कालीन मूर्तियाँ अधिकतर समूचे प्रस्तर की पटिया पर उकेर कर निर्मित की गई हैं , चारों ओर से देखी जाने वाली मूर्तियाँ कम हैं।

५) इस समय की पुरुष मूर्तियों में मस्तक के केशों का अंकन भी ध्यान देने योग्य हैं। कुषाण काल में मुकुट के नीचे कानों के ऊपर थोड़े केश दिखलाए जाते थे। गुप्त काल में मुख पर इस प्रकार के बाल दिखलाना बन्द हो गया , उन्हें कन्धों पर विपुलता से लहराते हुए दिखलाने लगे थे। गुप्तोत्तर काल में भाल के ठीक ऊपर काढ़े हुए बालों की एक छोटी सी पंक्ति दिखलाई पड़ने लगती है।

६) इस काल की मूर्तियों की दृष्टि में भी उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। अब इनकी दृष्टि अन्तर्मुखी नहीं है , अपितु दर्शक या भक्त की ओर पूरी तरह अवलोकन करने वाली है।

संदर्भग्रंथ:

२. के. डी. बी. काकिंड्रगटन, MATHURA OF THE GODS , मार्ग खण्ड-९, संख्या-२, मार्च १९५६, पृ.४।

३. मथुरा संग्रहालय मूर्ति संख्या-३९-४०.२८३१।

४. आनन्द कुमार स्वामी, HIIA, पृ. ७२।

५. स्टेला क्रेमरिच, INDIAN SCULPTURE, पृ. ६३।

६. मुण्डित मस्तक युक्त बुद्ध प्रतिमा का केवल एक ही नमूना अब तक ज्ञात है जो लखनऊ के राज्य संग्रहालयों में सुरक्षित है और मानकुवर बुद्ध प्रतिमा के नाम से पहचाना जाता है। (लखनऊ राज्य संग्रहालय मूर्ति संख्या ओ. ७०)

७. मथुरा संग्रहालय मूर्ति संख्या ००.ए.१, ३९.२८३१, ००.ए.५ आदि।

८. नीलकंठ पुरुषोत्तम जोशी, मथुरा की मूर्तिकला, पृ. ९, २१।